सम पर सूर्यास्त
प्रयाग शुक्ल

सम पर सूर्यास्त

प्रयाग शुक्ल

श्री फणीश्वरनाथ 'रेणु' की स्मृति को

सादर समर्पित है यह पुस्तक,
जिनसे मेरी भेंट तो कुल आठ-दस बार हुई थी
लेकिन जिनसे हुई हर भेंट
एक अमिट छाप की तरह मन में है,
और जिनके कथा-साहित्य तथा
वृत्तांतों-संस्मरणों का
एक लेखक-पाठक के नाते
सदा प्रशंसक रहा हूँ।

भूमिका

ये टिप्पणियाँ अपनी कथा आप कहती हैं। इनके लिखे जाने के प्रसंग, और इनके स्थान-काल-पात्र—सब इनमें कहीं-न-कहीं, किसी-न-किसी रूप में, पिरोये हुए हैं। इसलिए इनके परिचय में अलग से कुछ कहने की ज़रूरत मुझे महसूस नहीं हो रही है। सिवाय इसके कि इनके लिखे जाने की शुरुआत, आज से लगभग चार वर्ष पहले हुई थी, और ये सभी इस अवधि के बीच दैनिक 'जनसत्ता' के स्तंभ 'दुनिया मेरे आगे' में प्रकाशित होती रही हैं। इनके प्रकाशन के साथ ही लेखक मित्रों और पाठकों की जो प्रतिक्रियाएँ मिलनी शुरू हुईं, उन्होंने मेरा मनोबल बढ़ाया है, और समय-समय पर अपने कई अनुभवों को लिपिबद्ध करने के लिए और अधिक प्रेरित भी किया है। ध्यान नहीं पड़ता कि इससे पहले पाठकों की इतनी सीधी भागीदारी का एहसास पहले कभी और हुआ हो। जब-जब मैं मुंबई, कलकत्ता, गुवाहाटी, भोपाल, जोधपुर, सागर, उदयपुर, लखनऊ आदि नगरों में गया तो मैंने पाया कि दिलचस्पी के साथ मित्रगण इन्हें पढ़ रहे हैं, और कई ऐसे पाठक मिल रहे हैं, जिनसे मैं पहले कभी, किसी भी रूप में, परिचित न था। विभिन्न नगरों से बहुतेरे मित्रों-पाठकों के पत्र भी समय-समय पर मिलते रहे हैं। और जिस दिन कोई टिप्पणी प्रकाशित होती थी, उस दिन दिल्ली के मित्रों के कम से कम चार-पाँच फोन सुबह-सुबह ज़रूर आ जाते थे। कई मित्रों की प्रतिक्रियाएँ बाद में पता चलती थीं, पर, चलती ज़रूर थीं। इस सबकी याद मैं यहाँ विनम्रतापूर्वक इसलिए भी कर रहा हूँ कि उन सब मित्रों-पाठकों के प्रति अपना आभार व्यक्त कर सकूँ, जो इन टिप्पणियों पर अपने सुझाव और मंतव्य मुझे देते रहे हैं। आभार, उन अदेखे-अचीन्हे पाठकों का भी, जो इन्हें पढ़ते रहे होंगे, और जिनका कुछ पता मुझे 'जनसत्ता' के साथियों से भी मिलता रहा है।

मुझे इस बात की भी बड़ी प्रसन्नता है कि मित्रों-पाठकों ने इन टिप्पणियों के स्वभाव या प्रकृति में निहित कई चीज़ों को पहचाना और रेखांकित किया, और मुझे इनके स्वभाव के कई ऐसे पहलुओं से परिचित भी कराया, जिनसे मानों मैं स्वयं परिचित न था। यह जानकर मुझे निश्चय ही बहुत संतोष होता रहा है कि इनके गद्य की बुनावट की ओर बहुतेरे मित्रों-पाठकों का ध्यान गया, और ध्यान इस ओर भी गया कि इनमें कथा, कविता, ललित-निबन्ध, यात्रा-वृत्तांत, संस्मरण, चिट्ठी-पत्री आदि के तत्त्व मानों अनायास ही घुलना-मिलना शुरू हुए हैं, और इनके वृत्त से एक नई ही

प्रकार की विधा की कुछ आहट मिली है। जब यह आहट मुझे मिलनी शुरू हुई थी, तब मानों इन टिप्पणियों को लिखने का चाव तथा उत्साह और अधिक बढ़ गया था। गद्य लिखने का आनंद क्या होता है, इसका भी एहसास मुझे इन टिप्पणियों ने भरपूर कराया है।

सुप्रसिद्ध समाजशास्त्री और चिंतक श्री पूरनचंद जोशी ने इनके समाजशास्त्रीय पक्ष की ओर कई बार इंगित किया, और कृपापूर्वक फोन करके वे अपनी प्रतिक्रियाएँ मुझ तक पहुँचाते रहे, इसके लिए मैं सचमुच उनका बहुत आभारी हूँ। पिछले वर्ष यानी दो हज़ार के जनवरी महीने में, जब मेरा सागर जाना हुआ, और त्रिलोचन जी से मिलना भी, तो यह जानकर मेरे हर्ष का ठिकाना न रहा कि वे इन टिप्पणियों के नियमित पाठक हैं, और इनके गद्य के प्रशंसक भी। उनकी प्रतिक्रिया मेरे लिए बड़े से बड़े पुरस्कार से कम नहीं है। यही लगा कि इनका लिखा जाना हर तरह से सार्थक हो गया है। त्रिलोचन जी ने यह भी कहा कि इन्हें पुस्तक रूप में प्रकाशित ज़रूर कराना। जब यह पुस्तक प्रकाशित हो रही है तो उनके आशीर्वचनों की कृतज्ञतापूर्वक याद आना स्वाभाविक है।

मेरे अभिन्न मित्र श्री अशोक सेकसरिया की प्रतिक्रिया तो लगभग हर टिप्पणी पर मिली है, और उन्होंने समय-समय पर किंचित विस्तार से यह भी बताया है कि कोई टिप्पणी उन्हें किस कारण से अच्छी लगी है, या कोई क्यों कम अच्छी लगी है। ज़ाहिर है कि उन प्रतिक्रियाओं से मुझे बहुत कुछ समझने और सोचने को मिला है। मेरे रंगकर्मी मित्र देवेन्द्र राज अंकुर तो इनके नियमित पाठक रहे ही हैं। और यहाँ उनके खुले, 'विनोदी' सुझावों और सहयोग का स्मरण भी स्वाभाविक है जो मेरा उत्साह बढ़ाने में कम सहायक नहीं हुए हैं।

'जनसत्ता' के सम्पादक और मेरे प्रिय मित्र श्री ओम थानवी की ओर से इन्हें पुस्तक रूप में भी संकलित करने का सुझाव तो लगभग तभी आ गया था जब ये प्रकाशित होना शुरू ही हुई थीं। उनका आग्रह भी इनके कुछ नियमित रूप से लिखे जाने का कारण बना है। मेरी पत्नी ज्योति इनमें से कई टिप्पणियों की यात्राओं में मेरे साथ रही हैं, और प्रायः सभी टिप्पणियाँ उन्होंने इनके प्रकाशित होने से पहले ही पढ़ी हैं, और कई बार उन्होंने कुछ भूली-बिसरी चीज़ों की याद दिलाकर मेरी मदद की है, इसकी भी स्वाभाविक रूप से खुशी मुझे है।

पाठक स्वतः लक्ष करेंगे कि यहाँ संकलित सब नहीं, पर, कई टिप्पणियाँ उन यात्राओं से संबंधित हैं, जो देश के विभिन्न अंचलों की रही हैं। अगर इनमें राजस्थान की मरुभूमि है, तो केरल का जल, और मिज़ोरम और मणिपुर की पहाड़ियाँ भी हैं, दीव की लहरें हैं तो ब्रह्मपुत्र की भी, और महाराष्ट्र-गुजरात आदि की यात्राओं के भी कई संस्मरण हैं। मास्को, ढाका, और कलकत्ता, दिल्ली, मुंबई, चेन्नई, बेंगलूर, कानपुर-लखनऊ, सागर, जोधपुर, वाराणसी, सारनाथ, उज्जैन आदि कई नगर भी इन टिप्पणियों के वृत्त में हैं, और हैं वे बहुतेरे परिचित-अपरिचित जन जो इन यात्राओं में

किसी न किसी मानवीय मर्म के साथ मुझे उपस्थित मिले हैं। उन सबके प्रति भी आभारी हूँ।

जब हम यात्राओं पर निकलते थे तो मेरी छोटी बेटी वर्षिता को दिल्ली में अकेले ही घर की कई जिम्मेवारियाँ उठानी पड़ती थीं, पर, यह सब वह प्रसन्नतापूर्वक, हमें निश्चिंत रखते हुए ही करती रही है, सो इनके लिखे जाने में उसका सहयोग भी कम नहीं है।

अपने लेखक-पत्रकार जीवन में मैंने पत्र-पत्रिकाओं में पिछले कोई चालीस वर्षों में बहुतेरे लेख और टिप्पणियाँ-वृत्तांत आदि लिखे हैं, पर, उन्हें संकलित करने की ऐसी उत्कट इच्छा कभी नहीं हुई थी, जैसी कि इन टिप्पणियों को लेकर हुई है। ज़ाहिर है कि ऐसी इच्छा अगर अग्रजों, समवयसी मित्रों और पाठकों के दबाव का प्रतिफल है तो स्वयं इस एहसास का भी कि ये निरा अख़बारी टिप्पणियाँ नहीं हैं—इनमें कुछ ऐसा है, जो आगे भी संभवतः ताजा ही लगेगा—यानी ये टिप्पणियाँ बहुत करके उन पाठकों को भी पुरानी या 'डेटेड' नहीं लगेंगी जो इन्हें आज नहीं, कल पढ़ेंगे। या अगर वे इन्हें कल पढ़ चुके हैं तो आज भी इन्हें कुछ दिलचस्पी के साथ ही पढ़ना चाहेंगे। इसी सहज विश्वास के साथ मैं पाठकों को यह पुस्तक सौंप रहा हूँ। ये टिप्पणियाँ स्वयं मेरे लिए प्रकृति-उपकरणों, और मानवीय मनोभावों से एक 'नये' परिचय, और लगाव का कारण बनी हैं, और इनके लिखे जाने की प्रक्रिया में कला-संस्कृति के कई सवाल भी मन में एक नई गूँज के साथ उभरे हैं, सो इन 'दैनंदिनी' टिप्पणियों का अपने निजी जीवन में भी मैं एक बड़ा योग मानता हूँ। अपने मित्र कवि-कथाकार-आलोचक श्री रमेशचंद्र शाह का यह मंतव्य भी याद आ रहा है कि "टिप्पणियों का यह आकार-प्रकार आपको खूब रास आया है।" निश्चय ही, वह मुझे रास आया है, और अभिव्यक्ति की एक नई राह मेरे लिए खुली है। इसे एक पत्र में रेखांकित करने लिए उनका आभार मानता हूँ। आभार अपने प्रिय मित्रों मंगलेश डबराल और प्रियदर्शन का भी जिन्होंने इन टिप्पणियों को सतर्क दृष्टि से पढ़ा है, और समय-समय पर अपनी राय भी दी है।

एक बात और : ये टिप्पणियाँ जिस क्रम से लिखी गई थीं, ठीक उसी क्रम में यहाँ संकलित नहीं की गयी हैं। ऐसा मैंने उन्हें एक नया क्रम देने की इच्छा से किया है, और इसलिए भी कि उनका जो 'स्वतंत्र' रूप है वह बना रहे। जहाँ बहुत जरूरी लगा है, वहाँ उनके प्रकाशन-तिथि का उल्लेख कर दिया गया है। लेखन, और प्रकाशन की तिथि में अमूमन सप्ताह भर का ही अंतर रहा है। यहाँ संकलित टिप्पणियाँ दिसंबर, दो हज़ार तक की हैं।

26 जनवरी, 2002
नई दिल्ली

—प्रयाग शुक्ल

अनुक्रम

एक और भारत 13

उज्जयिनी में 15

खजुराहो में आम्र-मंजरियाँ 17

सफाई और कला 19

नंदीग्राम में 22

सुबहे बनारस 24

हरसिंगार 26

ये बादल वह बिजली 28

शान्ति कितनी शान्ति 30

चिड़ियों का चिल्लाना 32

लखनऊ-कानपुर 34

सारी रात का सफ़र 36

दीव की लहरें 38

मोलेला की माटी 40

केरल का जल 42

तिरुवनंतपुरम की खिड़की 44

चेन्नई में हिंदी 46

भोपाल में अंग्रेज़ी 48

काली दिल्ली 50

पृथ्वी का बावा 52

सागर के वृक्ष 54

राहतगढ़ 57

कवि त्रिलोचन 59

अम्बाह की राह पर 61

नाच री कठपुतली गोरी 63

हिम्मत की हिम्मत 65

सुमित्रानंदन पंत 67

ध्वनियों का संसार 69

रात आधी 72

हुसेन के साथ 74

खजुराहो में नया-पुराना 77
प्रकृति-पथ 79
मास्को में 'चाइ' 81
अरबात का इलाका 83
मीठा पेड़ 86
निंबा के गणेश 88
कलकत्ता से कल्याणी 90
ब्रह्मपुत्र के किनारे 93
मनोरम मिजोरम में 95
गर्वोन्नत रिक्शा 97
का बरखा 99
ढाका में मेघ 101
जैनुल के जलरंग 103
परिचित-अपरिचित 106
मुम्बई में 'रणांगण' 108
पानी! पानी! 110
पल-पल का हिसाब 112
औरंगाबाद के पथ पर 115
यमुना तीरे 117
दोपहर का भोजन 119
झोले का मुँह 121
पीला कनेर 123
कलकत्ता की ट्राम 125
जापानी नेकलेस 127
पहाड़ पर चिड़ियाँ 129
गूँजती गलियाँ 131
दीवार पर छाया 133
इंफाली हँसी 135
संध्या सुन्दरी 137
बंगाल के 'पुकुर' 139
हरा-भरा चंडीगढ़ 141
उद्यान में सूर्योदय 143
लखनऊ नया-पुराना 145
झील किनारे 147
शहर की ऊँचाई 149
काठचम्पा 151
मम पर सर्यास्त 153